International Journal of Advancement in Social Science and Humanity http://www.ijassh.in

(IJASSH) 2018, Vol. No. 5, Jan-Jun **e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722**

महाकाव्य महाभारत का काव्य सौंदर्य का समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ नीरज कुमारी

सह . आचार्य, संस्कृत विभाग, ठाकुर बीरी सिंह महाविद्यालय, टूंडला, फिरोजाबाद, भारत

CRITICAL STUDY OF THE POETIC BEAUTY OF THE EPIC MAHABHARATA

Dr. Neeraj Kumari

Associate Professor, Sanskrit Department

Thakur Biri Singh Degree College Tundla, Firozabad, India

ABSTRACT

The epic Mahabharata is a classical poem that depicts the development of Indian culture and religion in the changing times of ordinary life. It is known for the many achievements of war, religion, politics, love, and wisdom in the Mahabharata. Poetic beauty appears in many forms in the Mahabharata. It contains many stories, love stories, controversies, and mysteries. There are examples of Alankar, Rasa, Chhand, Taal and Boli in it, which make it as an excellent poem. Vyas ji has made elaborate use of euphemism, ornamentation and association in this. Its dialect and style are also very beautiful. The grand narrative of the Mahabharata, with its shape-shifting and engaging stories, make it a beautiful and interesting poem.

सारांश

महाकाव्य महाभारत एक ऐसा शास्त्रीय काव्य है जो सामान्य जीवन के बदलते समयों में भारतीय संस्कृति और धर्म के विकास को दर्शाता है। महाभारत के युद्ध, धर्म, राजनीति, प्रेम, और विवेक की अनेक उपलब्धियों के लिए यह जाना जाता है। महाभारत में काव्य सौंदर्य कई रूपों में दिखाई देता है। इसमें अनेक कथाओं, प्रेम कहानियों, विवादों, और रहस्यों को समाहित किया गया है। इसमें अलंकार, रस, छंद, ताल और बोली के उदाहरण मौजूद हैं, जो इसे एक उत्कृष्ट काव्य के रूप में बनाते हैं। व्यास जी ने इसमें व्यंजना, अलंकार और संगति का विस्तृत उपयोग किया है। इसकी बोली और शैली भी अत्यंत सुंदर है। महाभारत के भव्य वर्णन, आकार-विन्यास और आकर्षक कहानियों के साथ, इसे एक सुंदर और दिलचस्प काव्य बनाते हैं।

(IJASSH) 2018, Vol. No. 5, Jan-Jun **e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722**

परिचय

'जगद्गुरु' के नाम से विश्व में जिस प्रकार भारत विख्यात है, उसी प्रकार भारतीय संस्कृत भाषा भी विश्व की समस्त भाषाओं को जन्म देने वाली माता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। इस संस्कृत भाषा ने ही भारतीय नागरिकों को अपनी संस्कृति से संस्कारित करके अधिक से अधिक ज्ञानी - विज्ञानी, शूर-वीर, महात्मा, सन्त - महन्त इत्यादि के रूप में तेजस्वी यशस्वी और ओजस्वी पुरुषार्थी बनाया है । इन दिव्य ज्ञानी आत्माओं ने ही अविस्मरणीय अकल्पनीय अनुपम संस्कृत - साहित्य की सर्जना करके भारत को विश्व साहित्य में सम्माननीय एवं पूजनीय स्थान प्रदान करवाया है।

इसी भारत-वसुन्धरा पर देवता उपयुक्त अवसर देखकर दुष्टों के दलनार्थ और सज्जनों के सुरक्षणार्थ अवतीर्ण होने के लिये सदा ही लालायित रहते हैं, जैसा कि कहा गया यह वचन विश्व - विदित है"–

'गायन्ति देवाः किल गीतकानि, धन्यास्तु ते भारतभूमि - भागे ।

स्वर्गापवर्गास्पदमार्ग-भूते, भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरत्वात् ॥',

ज्ञान-विज्ञान से युक्त वेद, उपनिषद्, रामायण, पुराण, महाभारत, गीता, एवं स्मृति आदि शास्त्र सभी दिव्य देववाणी संस्कृत में विरचित हैं । इन शास्त्रों में सुरक्षित ज्ञान विज्ञान संस्कृत भाषा के पर्याप्त ज्ञान के अभाव में कभी भी किसी भी प्रकार प्राप्त नहीं किया जा सकता।

मनुस्मृतिकार ने संस्कृत के पूर्ण ज्ञाता भारतीय अग्रजन्मा को अपने आचरण के द्वारा चारित्रिक शिक्षा देने में पूर्ण समर्थ मानकर ही तो मानवमात्र को अपने - अपने चरित्र की शिक्षा इससे ग्रहण करने के लिये परामर्श दिया है कि

" एतद् - देश-प्रसूतस्य, सकाशाद् अग्रजन्मनः ।

स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन्, पृथिव्यां सर्व मानवाः ॥ २

अर्थात् पृथ्वी पर उत्पन्न समस्त मानवों को अपने अपने चरित्र की शिक्षा इस भारत वर्ष देश में उत्पन्न अग्रजन्मा ब्राह्मण से लेनी चाहिये । समय-समय पर अद्वितीय विद्वान्, महान् कवि और साहित्यकारों ने भी इस भारत भूमि में जन्म लिया है - जिनका साहित्य ही उनके ज्ञान-वैभव का प्रत्यक्ष प्रबल प्रमाण है। वाल्मीकि, व्यास, कालिदास, अश्वघोष, दण्डी, बाण, सुबन्धु, भारवि, माघ, भवभूति आदि संस्कृत के महान गौरव को बढ़ाने वाली विभूतियों से कौन परिचित नहीं है ?

संस्कृत भाषा अजर है, अमर है । इसमें लिखा साहित्य भी वैसा ही हो जाता है । इसके उपासकों में भी यश:- शरीर से वैसी ही अजरता, अमरता उत्पन्न हो जाती है। इसके सम्पर्क में आया हुआ व्यक्ति कभी मानसिक दृष्टि से प्रदूषित नहीं होता है । वह इतना स्वार्थी नहीं बनता है कि अपने स्वार्थ के लिये दूसरे को किसी प्रकार से हानि पहुँचाये । सदाचारिता का धनी वह कभी ऐसा कुकर्म नहीं करता जो उसको कलङ्कित करे । परायी

वस्तु उसकी दृष्टि में मिट्टी के ढेले के समान तुच्छ, परायी स्त्री माता के सदृश पूजनीय और सभी प्राणी आत्मवत् होते हैं । ऐसे आचरण वालों को ही महापुरुषों ने 'पण्डित' बताया है, जैसा कि प्रसिद्ध है-

मातृवत् पर-दारेषु, पर- द्रव्येषु लोष्टवत् ।

आत्मवत् सर्वभूतेषु, यः पश्यति सः पण्डितः ॥

संस्कृत-साहित्य महान् है । काव्य भी उसकी एक विधा में माना गया है। यह गद्यकाव्य, पद्यकाव्य और चम्पूकाव्य इन तीनों में विभक्त है। छन्दोबद्ध रचना पद्यकाव्य में, छन्दोरहित रचना गद्यकाव्य में और गद्य-पद्य - मिश्रित रचना चम्पू - काव्य के अन्तर्गत मानी जाती है । यह काव्य पुनः दृश्य-काव्य और श्रव्य-काव्य के रूप में विभक्त है। नाटक दृश्य-काव्य में ही माने जाते हैं । इनका प्रभाव जितना दर्शक पर द्रुत गति से होता है उतना श्रव्य-काव्यों से नहीं । कारण स्पष्ट है । मञ्च पर अभिनेता के आङ्गिक और वाचिक अभिनय को दर्शक के नेत्र और श्रोत्र जहाँ ग्रहण करते हैं, वहाँ उसकी बुद्धि उसके विषय को आत्मसात् कर लेती है । दर्शक कभी-कभी तो इतना दत्तचित्त हो जाता है कि वह अपने आपको ही अभिनेता मान लेता है और ऐसे समय जो उसे रस की (आनन्द की) अनुभूति होती है, उसका वाणी से वर्णन नहीं किया जा सकता। साहित्याचार्यों ने इस आनन्द को 'ब्रह्मानन्द - सहोदर' की संज्ञा दी है।

महाभारत आर्य-संस्कृति तथा सनातन धर्म का एक महान् ग्रन्थ तथा अमूल्य रत्नों का भण्डार है । यह भारतीय लौकिक साहित्य में वाल्मीकीय रामायण की परवर्ती द्वितीय रचना है। रामायण तथा महाभारत न केवल विशालकाय आर्षकाव्य है अपितु वे हमारे प्राचीन इतिहास के महत्वपूर्ण स्रोत हैं। महाभारत में भारतीय जीवन शैली की समग्र और यथार्थ प्रस्तुति मिलती है। इसमें धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक राजनैतिक और आर्थिक परिस्थितियों, विचारधाराओं परम्पराओं तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोणों की प्रचुर सामग्री संग्रहीत है। महाभारत केवल अपने रचनाकाल के जीवन मूल्यों और घटनाओं का ही निदर्शन नहीं कराता अपितु यह आधुनिक युग के जीवन मूल्यों के लिए भी उतना ही प्रासंगिक है, जितना पहले था और भविष्य में भी उतना होगा। यह न केवल प्राचीन संस्कृत महाकवियों को अपितु आज के अनेक भाषाओं के रचनाकारों को काव्य सृष्टि हेतु निरन्तर आकृष्ट कर रहा है । इसकी उपजीव्यता व्यक्त करते हुए स्वयं महर्षि व्यास का कथन है.

इतिहासोत्तमादस्माज्जायन्ते कविबुद्धयः ।

सर्वेषां कविमुख्यानामुपजीव्यो भविष्यति ।

पर्जन्य इव भूतानामक्षयो भारतद्रुमः ।।

महर्षि व्यास ने इसके महत्त्व और आकार - गौरव के कारण ही इसे 'महाभारत' कहा है, यथा –

महत्त्वाद् भारवत्वाच्च महाभारतमुच्यते ।

विद्वानों ने महाभारत को एशिया भूखण्ड की प्रतिभा का सर्वोत्कृष्ट मानदण्ड स्वीकार किया है, जो संस्कारवान् मनुष्य सभी अङ्गों सहित चारों वेदों और उपनिषदों को अच्छी तरह जानता हो किन्तु महाभारत को नहीं जानता,

(IJASSH) 2018, Vol. No. 5, Jan-Jun **e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722**

उसे विद्वान् (विचक्षण) नहीं कहा जा सकता । महाभारत इतिहास तथा काव्य होने के साथ-साथ अर्थशास्त्र, धर्मशास्त्र और कामशास्त्र भी है। इसी कारण इसे मानव जीवन अथ च प्राणिमात्र अथवा चराचर जीव-जगत् का समग्र शास्त्र माना गया है। महर्षि वेद व्यास का यह कथन सर्वथा यथार्थ है कि जो इस महाभारत में है, वह अन्यत्र भी है किन्तु जो इसमें नहीं है, वह कहीं नहीं है -

धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ ।

यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित् ।।

महर्षि वेद व्यास द्वारा विरचित 'पंचम वेद' की मान्यता वाला यह विशाल ग्रन्थ 'कार्ष्णवेद' की संज्ञा से भी अभिहित किया जाता है ।

महाभारत को 'महाकाव्यों का महाकाव्य' कहना समीचीन होगा क्योंकि वह ऐसी आधारभूत कृति है जिसने कई महाकाव्यों, आख्यानों आदि को जन्म दिया है। इसका प्रमाण भारतीय भाषाओं के साथ ही विश्व की ऐसी अनेकानेक कृतियाँ हैं जिनका उपजीव्य महाभारत रहा है। यदि हम केवल भारतीय साहित्य की बात करें तो देखेंगे कि संस्कृत से लेकर आज तक लगभग सभी भारतीय भाषाओं में महाभारत से गृहीत, अनुकृत या प्रेरित अनेक रचनाओं ने जन्म लिया है। इतना ही नहीं लोक-साहित्य ने भी इसे उपजीव्य बनाया है; और ऐसी तो असंख्य रचनाएँ होंगी जिन्होंने महाभारत से सकारात्मक या नकारात्मक प्रेरणा पाई हो।

रामधारी सिंह 'दिनकर' ने लिखा है कि "रामायण और महाभारत ये दो महाकाव्य पिछले दो हज़ार वर्षों से समस्त भारतीय काव्यों के उपजीव्य रहे हैं, बल्कि यह कहना चाहिए कि महाभारत से प्रेरणा लेकर लिखे गए नाटकों और काव्यों की संख्या संस्कृत में भी बड़ी थी और यह संख्या भारत की अर्वाचीन भाषाओं में भी विशाल है। महाभारत चरित्रों की नवीन व्याख्याएँ की जाती हैं और उनके द्वारा संस्कृति के परिवर्तनों पर प्रकाश डाला जाता है।"

"उसके पात्र और घटनाएँ, स्थितियाँ इतनी विलक्षण और गतिशीत हैं, उनमें शाश्वत तत्त्वों का समावेश है कि किसी भी युग में महाभारत युगानुरूप सृजन ही नहीं, सृजन और विचार-दृष्टि भी देता है।" अन्यत्र वे एक महत्त्वपूर्ण बात कहते हैं- "जब हमारी संस्कृति में परिवर्तन आते हैं, महाभारतीय चरित्रों की नवीन व्याख्याएँ की जाती हैं और उनके द्वारा संस्कृति के परिवर्तनों पर प्रकाश डाला जाता है।"

महाभारत में काव्य सौंदर्य का प्रत्येक अंश दृश्य वर्णन के रूप में पाया जा सकता है। इसमें कई रोमांचक और उत्तेजक घटनाएं हैं जो पाठक को अपनी ओर आकर्षित करती हैं। इसमें राजनीतिक और सामाजिक विवादों का वर्णन होता है जो इसे एक विस्तृत और संपूर्ण आध्यात्मिक ग्रंथ बनाते हैं। महाभारत में काव्य सौंदर्य का एक अन्य उदाहरण है उसमें व्यक्तियों के चरित्रों का विस्तारपूर्ण वर्णन होता है। उदाहरण के लिए, श्री कृष्ण के चरित्र को विस्तार से वर्णन किया गया है जो उनके विविध गुणों, क्रोध और प्रेम के साथ उनके धार्मिक तत्वों का प्रदर्शन करता है।संस्कृत के बाद प्राकृत और अपभ्रंश में भी महाभारत को उपजीव्य बनाकर अनेक रचनाएँ लिखी गईं। विभिन्न मतों और धर्मों के रचनाकारों ने महाभारत की कथा को अपने अनुसार ढालकर

उसका अलग पाठ रचा है। उदाहरणार्थ- जैनाचार्य जिनसेन (प्रथम) और जैनाचार्य ब्रह्मजिनदास द्वारा लिखित 'हरिवंश पुराण' में वस्तु और चरित्रगत अन्तर स्पष्ट लक्षित किया जा सकता है।

महाभारत द्वारा अनेक रचनाओं को जन्म देने का पहला बड़ा कारण तो यह प्रतीत होता है कि यह एक उदार रचना है जो अपने स्त्रोत से जन्म लेने वाली किसी रचना की स्वायत्तता का हरण नहीं करती, किसी को 'अनुकरण' की लज्जा में नहीं बाँधती, उलटे सर्जक को देश-काल की भिन्नता के बावजूद सृजन की मौलिकता के लिए मुक्त करती है। संक्षेप में वह लोकतांत्रिक अवकाश (स्पेस) देती है, जो किसी भी स्तर पर 'धर्मशास्त्र' कही जाने वाली दुनिया की कोई रचना नहीं देती। यह धार्मिकता के बहाने लोक-चेतना, संवेदना और जीवन की समग्रता के काव्य है।

दूसरा और महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि यह एकायामी काव्य नहीं है। सभी प्रकार के ज्ञान, धारणाओं और भावों के लिए यहाँ अवकाश है और सब अपनी-अपनी दृष्टि से इसमें आश्रय पा लेते हैं। महाभारत की इस विशेषता की ओर बहुत पहले, 11वीं शती के आदि तेलुगु कवि नन्वय भट्ट ने ध्यान आकर्षित किया। वे लिखते हैं- "धार्मिक विचारक महाभारत को धर्मशास्त्र मानते हैं, आध्यात्मिक महापुरुष इसे वेदांत कहते हैं, नैतिकतावादी इस ग्रंथ को नीतिशास्त्र और कवि पंडित इसे रस सिद्धक महाकाव्य मानते हैं, इतिहासकार तो इसे भारतीय इतिहास सिद्ध करते हैं, परम पुराण पंडित इसे अनेक पुराण ग्रंथों का संग्रह मानते हैं।"

महाभारत में से असंख्य कृष्ण, सैकड़ों-हज़ारों कर्ण, अर्जुन, भीम, एकलव्य, द्रोणाचार्य, द्रौपदी, गांधारी, धृतराष्ट्र, दुर्योधन, संजय, भीष्म, ययाति निकले हैं और अत्यंत विविध और कहीं-कहीं मूल से इतने अलग कि विरोधी स्वरूप में भी दिखाई देते हैं। इसका एक बड़ा कारण यह प्रतीत होता है कि महाभारत का कोई चरित्र न संपूर्ण रूप से उजला है न काला। दुर्योधन खलनायक होते हुए भी सर्वथा खल नहीं है। इसी तरह युधिष्ठिर परम सत्यवादी होते हुए भी किसी अवसर पर असत्य का आश्रय लेते हैं। व्यास मानते हैं कि कोई व्यक्ति पूर्ण नहीं है, यहाँ तक की पूर्ण पुरुष कृष्ण भी। कृष्ण भले ईश्वर हों उनकी मृत्यु होती है। अपूर्ण को ही तो बार-बार रचा जा सकता है। 'पूर्ण' तो सृजन की संभावना ही नष्ट कर देता है। संभवतः इसलिए आज भी महाभारत का स्त्रोत सूखा नहीं है, बल्कि कई अर्थों में अधिक प्रासंगिक ही है। महाभारत की कथावस्तु, घटनाचक्र और प्रमुख पात्र ही नहीं गौण कथा और नगण्य पात्र भी काव्य में प्रतिष्ठित हैं। युधिष्ठिर के यज्ञ की राख में लोटने वाला नेवला कितने महान सत्य को व्यक्त करते हुए असाधरण हो गया है। उसी तरह दुर्योधन का वह अदना-सा भाई विकर्ण बड़े-बड़े दिग्गजों से बड़ा है जो द्रौपदी को भरी सभा में नग्न करते समय समस्त वीरों, नीतिज्ञों से प्रश्न करता है कि 'क्या यही धर्म है? क्या यही न्याय है? क्या स्त्री दाव पर लगाने की वस्तु है? इस कौरव के इन प्रश्नों से, मिश्र जी के शब्दों में 'महाभारत कीलित' है। साधारण के भीतर असाधारण की सर्जनात्मक प्रतिष्ठा के और भी अनेक आयाम और अन्तर्कारण होते हैं।

वस्तुतः यह कृष्ण द्वैपायन व्यास की मेधा और परिपक्व प्रतिभा का विस्फोट है, जो किनारों में बँधी नदी की तरह नहीं, बल्कि एक विराट समुद्र की तरह तलातोम है- अपार, अदम्य, अगाध-हर पल गर्जना करता। यह शक्ति और वेग का काव्य है। इसमें अग्रसर होती सभ्यता के तमाम मिश्रण, तनाव, आपाधापी, अशांति, ईर्ष्या, मद, मोह और अंधमूढ़ता के साथ ही सधापन, दृष्टिसंपन्नता, विवेक, दर्शन, उदात्तता और जीवन की जटिल समस्याएँ

(IJASSH) 2018, Vol. No. 5, Jan-Jun **e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722**

और अनेक उत्तर भी हैं, और है एक सर्वनाशी युद्धः जो मनुष्य से लगाकर पशु, कीट, उदभिज आदि की सनातन वृत्ति हैः और विनाश की वह सीमा है जहाँ से पुनर्सृजन अनिवार्य होता है। वह नीति और अनीति; सच और झूठ, भौतिकता और आध्यात्मिक; स्वार्थ और परमार्थ को विस्मित कर देने वाला ताना-बाना बार-बार उधेड़ने, बार-बार उसकी सर्जनात्मक व्याख्या करने की लालसा जगाता है।

धर्मशास्त्रमिदंपुण्यमर्थशास्त्रमिदं परम्।

मोक्षशास्त्रमिदं प्रोक्त व्यासेन मित बुद्धिन।।

स्वयं महाभारतकार द्वारा उसे धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, मोक्षशास्त्र, इतिहास, नीतिशास्त्र कहकर उस के विविधोन्मुख रचाव का संकेत किया गया है-

'आदि पर्व' में इसे इतिहास कहा गया- 'जयो नामेतिहासोऽयं' (20) 'भारतानां यतशचायमितिहोसो महाद्भुतम्।' परन्तु यदि यह भ्रम है तो दूर हो जाना चाहिए कि महाभारत का शास्त्र या इतिहास होना उसके काव्य से अलग है। क्योंकि भारत में महाकाव्य की अवधारणा कभी इकहरी नहीं रही है, उसमें इतिहास, शास्त्र, कलाएँ, वृत्तांत, रस, पुरुषार्थ, मानव-व्यवहार, प्रकृति, समाज-यानी पूरी सृष्टि शामिल होती है- यहाँ तक की अन्तर्विरोध भी। इसी से उसका महाकाव्य-रूप बनता है। यदि महाभारत के लिए 'यन्न भारते तन्न भारते' कहा जाता है तो उसमें ऐसा कुछ भी वर्जित नहीं हो सकता जो भारत में हो या जो एक महासंस्कृति की संपूर्णता का बिम्ब हो। युद्ध संसार के सभी आदिकाव्यों की मूल विषयवस्तु रही है। महाभारत ने इसे भाई-भाई के युद्ध के माध्यम से उठाकर अपूर्ण सूझ-बूझ का परिचय दिया है। आशय यह है कि जहाँ युद्ध प्रायः अस्वाभाविक और असंभव माना जाता है, वहाँ भी युद्ध है, जहाँ भी युद्ध है वहाँ असत्य, क्रूरता और हीन वृत्तियाँ अपनी पराकाष्ठा पर पहुँचती हैं। सत्य के भीतर असत्य, उदात्त के भीतर अनुदात्त, पुण्य के भीतर पाप, न्याय के भीतर अन्याय, सहृदय के भीतर क्रूर का प्रवेश हो जाता है और ऐसी चरमताएँ टकराती हैं जहाँ अन्ततः मूल्यध्वंस होता है। महाभारत इसी दुर्दम्य काल के बीचों-बीच 'गीता' की रागिनी छेड़ता है जहाँ कर्म, दर्शन, विश्व-व्याख्या आदि का विचित्र सम्मिश्र होता है। गीता भी महाभारत को विश्वकाव्यों में अद्वितीय, विलक्षण और विस्मायक बनाती है। केवल गीता की ही नहीं, गीता के महाभारत के बीचों-बीच होने की भी जितनी व्याख्या की जाए वे अपर्याप्त प्रतीत होती है।

अगर हम महाभारत के रचना-शिल्प पर विचार करें तो वह कथाओं, दंतकथाओं, काल्पनिक स्वरूपों और विरूपीकरण से भरा है जो एक सर्जनात्मक कृति की कलात्मक माँग होती है। इसकी कथाओं और पात्रों में अनेक प्रकार के संकेत और गूढ़ार्थ हैं। उदाहरण के लिए, राजा अंधा है। और अंधे राजा के राज्य में सारे मूल्य और विधिसम्मत तत्त्व कैसी अंधता को प्राप्त होते हैं- इसकी ओर महाभारत से अधिक सटीक संकेत कौन कर सकता है? इसका एक पक्ष और है कि विचारशील रानी जो राजा की आँख हो सकती थी, उसने भी आँख पर पटटी चढ़ा ली। यानी पुर और अन्तःपुर दोनों जगह अंधेरा! अब इसके कितने नए अर्थ, कितनी व्यंजनाएँ संभव हैं, इसका कोई एक उदाहरण लें तो वह धर्मवीर भारती का 'अंधायुग' हो सकता है।

(IJASSH) 2018, Vol. No. 5, Jan-Jun **e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722**

महाभारत की ऐतिहासिकता पर एक अलग कोण से विचार करना चाहिए। यानी प्रतीकात्मक इतिहास-बोध से, क्योंकि वह मिथकीयता से संपन्न एक महाकाव्य भी है। इसके सभी पात्र एक और चरित्र हैं तो दूसरी ओर प्रतीक। मानो सृष्टि-मंच पर एक विराट नाटक खेला जा रहा है जिसमें अनेक घात-प्रतिघात हैं। खुद काव्य भी नाटक खेल रहा है, अनेक रूप बदलकर । ऐसी स्थिति में हमें इसके भीतर अनेक पाठों की संभावना देखनी होगी। काव्य के साथ कथा, नाटय, इतिहास, संस्कृति, मानव-व्यवहार, कल्पना ओर फेंटैसी के ऐसे संयोजनों को स्थिति और मानव नियति की अन्तर्धारा के साथ पढ़ना होगा। यदि महाभारत में इतनी संभावनाएँ न होतीं तो वह स्रोत ग्रंथ नहीं हो सकता था, क्योंकि हर पहलू में अनेक स्तरः आयाम और पर्याप्त अवकाश नहीं होता- तब तक वह युग-युग से, अनेक मत-मतांतर के, मनःस्थिति और अभिरुचि के सर्जकों का उपजीव्य नहीं बनता। क्या यह विचित्र नहीं कि एक ऐसी कृति जो युद्ध का आख्यान है उसे अपना उपजीव्य एक जैन मुनि बनाता है और उसमें अपने मत के लिए अवकाश होते हुए भी अन्ततः युद्ध-विरोधी काव्य है।

महाभारत के पात्र जो भोग-भोग रहे हैं, उसके भीतर कथा से अधिक विचार और कर्म के भोग की विचित्र भागीदारी है। उदाहरण के लिए, भीष्म जैसे दृढ़ प्रतिज्ञ, आजीवन ब्रह्मचारी, महावीर को विडंबना यह है कि उसकी मृत्यु का कारण शिखंडी -एक क्लीव-है। लेकिन आप उस अन्तःसूत्र को देखें जिसमें पिता के भोग के लिए भीष्म एक सुंदरी युवती उसे दे देता है। भोगने के लिए किसी को स्त्री अर्पित कर स्वंय भोग को त्यागना अपने-आप में एक विसंगति है। फिर यह ब्रह्मचारी अपने सौतेले भाइयों के लिए, स्वयंवर को आतुर कन्याओं का हरण करता है। पात्र के त्याग और वीरत्व को गरिमा प्रदान करते हुए भी कवि उसके इन कृत्यों को अक्षम्य मानता है, फलस्वरूप एक बहुत ही दारुण, विडंबनापूर्ण अन्त रचता है। अपहृत कन्याओं में से ही एक 'शिखंडी ' के रूप में पुनर्जन्म लेती है। अपने कर्मों के लिए भीष्म को उसी से दंडित होना होता है। यह नियति और कर्म का एक अन्तःसूत्र है। अब कोई महाभारत-काल में 'पुनर्जन्म' की काल-गणना का विषय बना ले- तो कोई क्या करता है। सच तो यह है कि काव्य का प्रतीकात्मक और मिथकीकरण इतनी छूट की इज़ाज़त तो देता ही है।

उपसंहार

महाभारत में अनेक पात्र और ढेरों कथाएँ हैं जो कर्म और कर्मदंड, कर्म और नियति, कर्म और विवेक-अविवेक वगैरह से जुड़ी हैं। परन्तु एक काव्य-न्याय भी होता है: जो संसार के न्याय से अलग, रचनाकार के विवेक से संबोधित होता हैः जिसे वह कथा-रूप देता है। यही बात हम वासुदेव की व्याध के हाथों हत्या में देखते हैं। इसके सूत्र पूर्वजन्म और पूर्व कल्प तक जाते हैं। त्रेता में राम ने छिपकर बाली का वध किया था, जिसके लिए तुलसीदास का बाली कहता है-

'धर्म हेतु अवतेरहुं गुसाईं, मारेहु मोहि व्याध के नाईं।'

कदाचित यही बाली व्याध बनकर द्वापर में विष्णु (राम) के पुर्नअवतार वासुदेव की हत्या करता है। ज़ाहिर है ईश्वर भी कर्म-दंड से बच नहीं सकता। यह भारतीय कर्म-सिद्धार्थ है, परन्तु काव्य-न्याय भी है। यदि महाभारत का रचियता व्यास जैसा निस्पृह, साहसी, तपस्वी नहीं होता तो परात्पर वासुदेव के इस 'अन्त' को टाल देता,

भले ही इससे एक सार्थक कथ्य की हत्या हो जाती। इस काव्य-न्याय और काव्यान्त ने न जाने कितने सर्जकों को उत्प्रेरित किया होगा।

सन्दर्भ

1. महाभारतकालीन समाज, सुखमय भट्टाचार्या (अनुवादक - पुष्पा जैन) लोक भारतीय प्रकाशन, इलाहाबाद, 1966
2. महाभारत के प्रमुख पात्रो का मनोवैज्ञानिक अध्ययन, डॉ. उमा श्रीवास्तव (अप्रकाशित) शोध प्रबन्ध राजस्थान विश्वविद्यालय, 1973
3. महाभारत की समालोचना, श्रीपाद दामोदर सातवलेकर, स्वाध्याय मण्डल, सतारा, 1942
4. महाभारत मीमांसा, अनुवादक पं. माधवराव सप्रे, बालकृष्ण प्रकाशन, पांडुरंग टंकार पूना, 1920
5. महाभारत मीमांसा, पं. देवीदत्त शुक्ल, इण्डियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग, 1982 82. महाभारत में धर्म, शकुन्तला तिवारी, पाटल प्रकाशन, आगरा, 1960
6. महाभारत में राज्य व्यवस्था, प्रेम कुमारी दीक्षित, अर्चना प्रकाशन, लखनऊ,1972
7. महाभारत में लोक कल्याण की राजकीय योजनाएं, डॉ. कामेश्वरनाथ मिश्र, भारत मनीषा प्रेस, वाराणसी, 1972
8. महाभारत का काव्य सौन्दर्य सरला दीक्षित, प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली, 1994 86. महाभारत हिन्दी टीका सहित 1 से 6 भाग, गीता प्रेस, गोरखपुर
9. संस्कृति डॉ. सुजाता सिन्हा, डॉ. उर्मिला सिंह, डॉ. हेमा वर्मा, महाभारतकालीन भारतीय विश्व भारती पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2007 मैक्समूलर, दि उपनिषद्स, दो भाग (अनुवाद), आक्सफोर्ड, 1879 विष्णुसहस्रनाम, भीष्मस्तवराज, अनुस्मृति, गजेन्द्रमोक्ष, गीता प्रेस, गोरखपुर वैदिक माइथालौजी, मैकडानेल, ए. ए., 1958
10. वैदिक इंडेक्स, दो भाग, मैकडानेल और कीथ, 1958

REFERENCES

1. Sukhmay Bhattacharya (Translator:Pushpa Jain), (1966) *Mahabharatkaleen Samaaj*, Lok Bhartiya Publication, Allahabad.
2. Dr Uma Srivastava, (!973), *Mahabharat ke Pramukh Patron ka Manovaigyanik Adhyayan*, (Unpublished) Dissertation University of Rajasthan
3. Shripad Damodar Satvalekar, (1942), *Mahabharat ki Samalochna*, Swadhyay Mandal, Satara.
4. *Mahabharat Meemamsa*, Translator: Pt. Madhavrao Sapre, Balkrishna Publication, Pandurang Tankar Puna 1920
5. Pt. Devidutt Shukla, (1982), *Mahabharat Meemamsa*, Indian Press Ltd. Prayag
6. Shakuntala Tiwari, (1960), *Mahabharat me Dharma*, Patal Publication, Agra
7. Prem Kumari Dixit, (1972), *Mahabharat me Rajya Vyavastha*, Archana Publication, Lucknow.

8. Dr. Kameshwarnath Mishra (1972), Mahabharat me Lok Kalyan ki Rajkiya Yojnayen, Bharat Manisha Press, Varnasi.
9. Sarla Dixit, (1994), *Mahabharat ka Kavya Saundrya,* Pratibha Publication, Delhi.
10. *Mahabharat,* Volumes 1 to 6 with Hindi Commentary, Geeta Press, Gorakhpur
11. Dr. Sujata Sinha, Dr. Urmila Singh, Dr. Hema Verma (2007), *Sanskriti,* Mahabharatkaleen Bhartiya Vishwa Bharti Publications, New Delhi, First Edition, 2007
12. Max Müller, (1879), *The Upanishads*, two parts (translation), Oxford.
13. *Vishnusahastranaam, Bheeshmastavaraj, Anusmriti, Gajendramoksha,* Geeta Press, Gorakhpur.
14. McDonnell, A. A., (1958), Vedic Mythology
15. McDonnell and Keith, (1958) Vedic Index, two parts